स्वचालन

प्रिय मित्रों,

बाबूजी महाराज अपने संदेशों के ज़रिये, हमें अपने अभ्यास में *ऑटामॅटिज़्म* यानी स्वचालन लाने के लिये प्रेरित करते हैं। सबसे मूलभूत अर्थ में, वे हमें अपनी साधना को हर रोज़ एक ही समय पर करके उसे नियमित करने को कह रहे हैं। हर काम के लिये नियमित रूप से एक वक़्त तय करना स्वास्थ्य के लिये लाभदायक होता है, जिसमें सही समय पर खाना और सोना भी शामिल है। किसी काम को यदि हर रोज़ एक निश्चित समय पर किया जाये, तो उस समय पर कार्य करना स्वाभाविक और सहज बन जाता है, जिसके कारण हमारी प्रणाली में एक *जैविक घड़ी* स्थापित हो जाती है।

पहला कदम

जब हम नियमितता के साथ कोई कार्य करते हैं, तब हमारी प्रणाली उसके लिये नियमबद्ध हो जाती है। हमारा मन उसके लिये सहज ही तैयार हो जाता है। जब हम नियमित रूप से ध्यान करेंगे, तब हम विचारों के साथ इतना ज़्यादा संघर्ष नहीं करेंगे। हर सुबह एक ही समय पर ध्यान करने की आदत डाल कर, हम सहज रूप से ध्यान में डूब जायेंगे; हमें ज़्यादा कोशिश नहीं करनी पड़ेगी। और यदि हम बाबूजी के पहले नियम के अनुसार सूर्योदय से पहले ही ध्यान पूरा कर लेंगे, तो यह प्रक्रिया हमें और भी स्वाभाविक लगेगी।

वास्तव में, चीज़ों को ठीक समय पर करने में नियमितता लाने की कार्यविधि पर काम करना महज़ पहला कदम है; स्वचालन के बारे में असल में बाबूजी महाराज जो बताते हैं उसे समझने की यह

शुरुआत भी नहीं है। फिर भी, हममें से कई लोगों को, यहाँ तक कि पहले कदम को स्वीकार करने में भी कुछ स्पष्टीकरण की ज़रूरत पड़ती है, क्योंकि 'स्वचालन' शब्द को अकसर ग़लत समझा जाता है। सहज कार्य का मतलब यंत्र मानव होना नहीं है, न ही रोबोट की तरह यंत्रवत् या नीरस होकर काम करना है। आज़ादी पर रोक लगाने की बजाय, वास्तव में यह हमें बड़ी से बड़ी आज़ादी के लिये तैयार करता है। उदाहरण के लिये, यदि हम प्रकृति की कार्यप्रणाली पर ग़ौर करेंगे, तो हम जल्द ही समझ जायेंगे कि प्रकृति के कार्य सहज होते हैं। बादल अपने पानी को बरसाने या रोके रखने का चयन नहीं करता। प्रकृति में कोई विकल्प नहीं होता। सबकुछ अपने आप ही सबसे स्वाभाविक तरीक़े से होता रहता है।

यही बात हमारी गतिविधियों पर भी लागू होती है। एक अत्यंत मुश्किल उदाहरण है अंतरिक्ष यात्री का, जिसे बाहर अंतरिक्ष में यात्रा करने की आज़ादी का आनंद लेने के लिये अपनी आदतों में अत्यधिक स्वचालन की आवश्यकता होती है। हममें से अधिकांश लोग कार चलाते समय स्वचालन की ज़रूरत को समझ सकते हैं। बिना अभ्यास के कई सारी चीज़ें एक साथ करने में हमें कठिनाई होगी – *स्टीयरिंग, एक्सीलरेटर* और *ब्रेक पेडल* का उपयोग करना, *गीयर* बदलते समय *क्लच* दबाना, आगे, बगल वाले और पीछे दिखाने वाले शीशे में देखना, *इंडिकेटर* का उपयोग करना और भीड़ में से अपनी कार को चलाते हुए अकसर बातचीत करना या संगीत सुनना अथवा इंटरनेट पर रेडियो सुनना। जहाँ चाहें वहाँ मुक्त रूप से गाड़ी चला पाने के लिये, हम स्वचालन पर निर्भर रहते हैं।

सहजता पाने के लिये, बड़े प्रयास की आवश्यकता होती है

हम इस 'मन-विहीनता' की अवस्था को भी परिपूर्णता के काफ़ी उच्चतर स्तर तक ले जा सकते हैं, जिसे पतंजलि ने अपने योग सूत्रों के आरम्भ में योग की परिभाषा के रूप में इतनी सुंदरता और सहजता से प्रस्तुत किया है :

1.2 योग: चित्त-वृत्ति निरोध:

योग अस्तित्व की वह अवस्था है जिसमें मन की विचारात्मक चयन करने की गतिविधि धीमी हो जाती है और आख़िर में रुक जाती है।

परिपूर्णता की उस आदर्श अवस्था में जानबूझ कर किसी सुधारक निवेश की आवश्यकता नहीं होती है। जितना ज़्यादा मानसिक निवेश की ज़रूरत पड़ती है, उतना ही काम अपूर्ण होता है। एक प्रसिद्ध बाँसुरीवादक नींद से जागकर भी कुशलता से बाँसुरी बजायेगा। भले ही बाँसुरीवादक आधी नींद में हो, हो सकता है कि उसका दिमाग़ पूरी तरह से सक्रिय न हो, लेकिन यदि हम उसके हाथ में बाँसुरी थमा दें, तो उसकी साँसें बहकर मधुर संगीत के रूप में सुनाई देंगी और उसकी उँगलियाँ

चलने लगेंगी। हो सकता है कि वह पहचान ही न पाये कि वह कौन सी धुन बजा रहा है, लेकिन सुनने पर वह कला हमें मंत्रमुग्ध कर देगी। उसकी बाँसुरी पर महारत सहज बन गई है; उसे अब और सक्रिय मानसिक चयन करने की ज़रूरत नहीं पड़ती है।

जब इंसान किसी ख़ास हालत में होता है, जहाँ सोचने की कोई गुँजाइश नहीं रहती, तब सोचने वाला ही ग़ायब हो जाता है। मनोविज्ञान इसे *फ्लो स्टेट* यानी 'बहाव अवस्था' या *बीइंग इन द ज़ोन* यानी 'क्षेत्र में होना' जैसे शब्दों के साथ वर्णित करता है – एक ऐसी दशा जिसमें कोई विशेषज्ञ अपनी कला में इस हद तक डूब जाता है कि उसे अपने होने का तक भान नहीं रहता। वह कहाँ है? वह अपने काम में डूब गया है।

अकसर एक बास्केटबॉल खिलाड़ी के पास यह अंदाज़ा लगाने का वक़्त तक नहीं होता है कि "मैं यह निशाना या शॉट मारूँ या वह शॉट लूँ?" जब तक वह इसका चयन करता है, तब तक तो वह मौका हाथ से निकल जाता है। उसके कार्य सहज और स्वचालित होने चाहिये। अत: वह स्वचालन की इस अवस्था पर कैसे पहुँचता है? इस अवस्था तक पहुँचने की तैयारी करने में वह जो प्रयास करता है उसकी हमें कद्र करनी चाहिये। सहजता पाने के लिये, बड़े प्रयासों की आवश्यकता होती है। एक बाँसुरीवादक कई सालों तक अभ्यास करता है, कई बार अपनी कला के हर पहलू पर महारत हासिल करने लिये संघर्ष करता है। बास्केटबॉल खिलाड़ी हर तरफ़ से, हज़ार बार अपने निशाने का अभ्यास करता है, ताकि ज़रूरत के वक़्त उसका शॉट सहज बन जाये।

चेतना पर महारत पाना

आध्यात्मिकता में, हमें चेतना पर ही महारत पानी होती है। चेतना के वर्णक्रम को इन्द्रधनुष की तरह समझें, जिसमें हर एक रंग चेतना की एक विशिष्ट आवृत्ति को दर्शाता है। अपने भौतिक जीवन में आध्यात्मिक अभ्यासों को शामिल करने से हमें ऐसे चरण पर पहुँचने में मदद मिलती है जहाँ हम समय की आवश्यकता के अनुसार, सहजता से चेतना की किसी भी आवृत्ति तक पहुँच सकते हैं। बाबूजी इसका उदाहरण थे। एक पल के लिये वे विस्मृति में खोकर, केन्द्र के

सहज कार्य का मतलब यंत्र मानव होना नहीं है, न ही रोबोट की तरह यंत्रवत् या नीरस होकर काम करना है। आज़ादी पर रोक लगाने की बजाय, वास्तव में यह हमें बड़ी से बड़ी आज़ादी के लिये तैयार करता है। उदाहरण के लिये, यदि हम प्रकृति की कार्यप्रणाली पर ग़ौर करेंगे, तो हम जल्द ही समझ जायेंगे कि प्रकृति के कार्य सहज होते हैं। बादल अपने पानी को बरसाने या रोके रखने का चयन नहीं करता। प्रकृति में कोई विकल्प नहीं होता। सबकुछ अपने आप ही सबसे स्वाभाविक तरीक़े से होता रहता है।

साथ एकरूप हो जाते और कुछ ही देर बाद वे बहुत ही उत्साहपूर्ण तरीक़े से अभ्यासियों का मन बहलाते हुए नज़र आते। उनकी चेतना की आवृत्ति अनके कार्य की आवश्यकताओं के अनुरूप लगातार ढलती जाती थी। हम सिर्फ़ कल्पना ही कर सकते हैं कि उन्होंने कार्यालय में अपने से कम ओहदे वालों और वरिष्ठ सहकर्मियों के साथ कैसे परस्पर मेलजोल रखा होगा। यह सब ख़ुद-ब-ख़ुद हो जाता था। ऐसी थी उनकी स्वाभाविकता।

चेतना की एक विशेष आवृत्ति पर सहज रूप से जा पाने के लिये, हमें पहले से ही उस पर महारत हासिल कर लेनी होगी। जब तक कि हम चेतना की एक विशेष आवृत्ति पर पहुँचकर उसके परे नहीं चले जाते, हम अपने मन से उस आवृत्ति पर वापस नहीं जा सकते हैं। एक बास्केटबॉल खिलाड़ी की तरह, जिसे हर *शॉट* का अभ्यास करना होगा ताकि सही वक़्त पर वह सही *शॉट* मार सके उसी तरह यदि हमें भी आवश्यक आवृत्ति से मेल बिठाना है तो चेतना के हर स्तर पर महारत हासिल करनी होगी।

एक आवृत्ति से किसी दूसरी आवृत्ति पर जाना महज़ चाहने से या उसके लिये प्रार्थना करने से नहीं होगा। बार-बार हम अभ्यास के सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू पर आ जाते हैं। बिना अभ्यास के हम सहज क्रिया निर्मित नहीं कर सकते हैं। जैसे साइकिल चलाने, या फुटबॉल खेलने या एक संगीत वाद्य बजाने की तरह अभ्यास ही इसकी कुँजी है। अभ्यास क्या है? - सहजता पाने के लिये प्रयास करते रहना।

प्रयास, सहजता और कर्ता-भाव

चेतना पर महारत हासिल करने की ओर हमारे प्रयास इस भावना की ओर ले जा सकते हैं कि, "मैं ही कर्ता हूँ"। यह भाव, जो प्रयास के कारण उपजता है, यही अहंकार का सटीक वर्णन भी है। हम अहंकार शब्द के मूल को देखकर इस बात को समझ सकते हैं, जहाँ संस्कृत में *अहं* यानी 'मैं-पन' और *कार* का मूल शब्द है क्र यानी 'करना'। इस अर्थ में, अहंकार का यथाशब्द अर्थ है 'मैं कर्ता हूँ'। प्रयास सहित ध्यान करना, और साथ में उससे जुड़ा 'कर्ता-भाव' यही हमारे अहंकार को और बढ़ावा देता है। इससे ध्यान करने का मूल उद्देश्य विफल हो जाता है।

दरअसल, स्वचालन का वास्तविक अर्थ है अपने कर्ता-भाव या अहंकार को दूसरे को सौंप देना। वह कैसे सम्भव है? ऐसा तभी हो पायेगा यदि, हमें जिस हद तक किसी काम को करने का बोध रहता है, तब भी हम यह महसूस करें कि यह कार्य मेरे अलावा किसी और माध्यम के ज़रिये हो रहा है। (कृपया नोट करें कि कर्ता-भाव सिर्फ़ एक भाव या मनोभाव है। इसे त्यागने का मतलब यह नहीं है कि हम निष्क्रिय बन जाते हैं।)

संतजन साक्षी-भाव की प्रशंसा करते हैं, जिसमें हम ख़ुद को हमारे कार्यों का कर्ता नहीं समझते,

बल्कि उनका साक्षी मानते हैं। भगवान कृष्ण, ऋषि अष्टावक्र, और उपनिषदों ने साक्षी-भाव की प्रशंसा की है, जिसे विभिन्न जगहों पर विस्तार से समझाया गया है। लेकिन अधिकांश लोगों के लिये साक्षी-भाव में होना आसान नहीं है। एक साक्षी अनासक्त और अप्रभावित होता है, वह अपने अनुभवों और आसपास के वातावरण से अनभिज्ञ बना रहता है। क्या हम अपने ही परिवार से निर्लिप्त और अनजान बने रह सकते हैं? इसीलिये, बाबूजी ने हमारे लिये कर्ता-भाव की कमियों के परे जाने का एक सीधा-सादा तरीक़ा सुझाते हुए चीज़ों को आसान कर दिया है। इस तरीक़े में, हम कर्ता बने रहते हैं, लेकिन हम अपने कर्म ईश्वर को समर्पित कर देते हैं। ऐसा करके, बाबूजी हमारी सभी गतिविधियों में एक नि:स्वार्थ प्रेरणा प्रस्तुत करते हैं। इस नये मनोभाव के साथ, हम अपने आध्यात्मिक जीवन में अचानक ही अहंकार का उभार लाये बिना आराम से प्रयास कर सकते हैं। भक्ति मार्ग की यही प्रभावकारिता है। हम इसे सतत स्मरण के अभ्यास के रूप में भी जानते हैं।

चेतना की आवृत्तियों के साथ काम करना

जब हम चेतना की किसी विशेष आवृत्ति पर महारत हासिल करके उससे एकरूप होना सीख रहे हों, तब हमें कैसे प्रयास करने होंगे? आमतौर पर, हम AEIOU शब्दावली द्वारा वर्णित प्रक्रिया को अपनाते हैं। (AEIOU यानी दशा को प्राप्त करना, दशा को तीव्र करना, दशा को आत्मसात् करना, उसके साथ एक हो जाना, और अन्त में एकरूप दशा तक पहुँचना) AEIOU किसी भी नई दशा को आत्मसात् करने में एक महत्त्वपूर्ण कदम है, ताकि वह दशा अवचेतना में सराबोर हो जाये, और स्वचालन को स्थापित होने दे। एक अन्य महत्त्वपूर्ण प्रयास जो हम करते हैं वह है नियमित दैनिक सफ़ाई, क्योंकि चेतना की विशुद्धता के बिना बाक़ी सारी कोशिशें जीवन को और ज़्यादा जटिल बना देती हैं। यहाँ तक कि चेतना की शुद्धता के बिना हम उन विभिन्न आवृत्तियों के काम की बारीकियों के बारे में जागरूक भी नहीं हो पायेंगे।

हम जिस तरीक़े से किसी नई दशा के साथ काम करते हैं वह पवित्र होना चाहिये। यदि हम इसे सक्रिय बनाना चाहते हैं, तो शारीरिक स्तर के साथ-साथ, हर एक स्तर पर इसकी अभिव्यक्ति होनी चाहिये। हमारी आंतरिक दशा के अनुरूप अपनी जीवन पद्धति को ढालने से दशा में सुधार

इसीलिये, बाबूजी ने हमारे लिये कर्ता-भाव की कमियों के परे जाने का एक सीधा-सादा तरीक़ा सुझाते हुए चीज़ों को आसान कर दिया है। इस तरीक़े में, हम कर्ता बने रहते हैं, लेकिन हम अपने कर्म ईश्वर को समर्पित कर देते हैं। ऐसा करके, बाबूजी हमारी सभी गतिविधियों में एक नि:स्वार्थ प्रेरणा प्रस्तुत करते हैं। इस नये मनोभाव के साथ, हम अपने आध्यात्मिक जीवन में अचानक ही अहंकार का उभार लाये बिना आराम से प्रयास कर सकते हैं। भक्ति मार्ग की यही प्रभावकारिता है। हम इसे सतत स्मरण के अभ्यास के रूप में भी जानते हैं।

आ सकता है। उदाहरण के लिये, यदि हम अपनी साँस लेने की प्रक्रिया को धीमा होने देकर अपनी आंतरिक अवस्था को उसके समान बना लेते हैं, तो हमारी आंतरिक अवस्था गहन होती जायेगी। इसके विपरीत, साँस लेने का विचलित पॅटर्न विरोध का भाव निर्मित करता है, जो बाद में हमारी आंतरिक अवस्था को जोखिम में डालता है।

बाहरी दशा को सँवार कर आंतरिक दशा का उसके साथ मेल बिठाने के इस सिद्धान्त को बाबूजी जानते थे। उदाहरण के लिये, प्रेम और तड़प निर्मित करने के लिये यह उनकी पद्धति का आधार है। बाबूजी ने यह माना कि हम उसी को याद करते हैं जिनसे हम प्रेम करते हैं; उन्होंने सुझाव दिया कि यदि हम किसी इंसान को प्रेम करना चाहते हैं तो हमें इस प्रक्रिया को उलटा कर देना है – उसे याद करके उसके लिये प्रेम पैदा करें। सन् 1982 में सूरत में दिये गये अपने संदेश में, उन्होंने यह बताया कि यदि अभ्यासी में सच्ची तड़प न हो तो वह तड़प की हालत की बस नक़ल करके भी अपने भीतर उसे पैदा कर सकता है। भले बनावटी ही सही, लेकिन आने वाले समय में वह तड़प असली बन जायेगी।

बाहरी दशा को ठीक करके आंतरिक दशा को समायोजित करने के इस सिद्धान्त को जीवन के कई पहलुओं में लागू किया जा सकता है। फिर चाहे वह हमारे बातचीत करने का तरीक़ा हो, बाहरी चीज़ों की ओर हमारा रवैया और हमारे विचार हों, हमारा बरताव और कार्य हों, भोजन ग्रहण करने का हमारा तरीक़ा हो, सोने का तरीक़ा, साँस लेने का तरीक़ा, या देखने का तरीक़ा, वे सभी हमारी आंतरिक अवस्था को बाधित करते हैं और इसे बढ़ाने में योगदान भी देते हैं।

जैसे-जैसे हर एक नई दशा हमारे अंतस में समाहित होती जाती है, वैसे-वैसे हमारे प्रयास सूक्ष्मतर होते जाते हैं। समय के साथ, इसे खो देने के डर से जितना सम्भव हो इस दशा को पकड़े रहने की बजाय, हम पायेंगे कि हमारी मदद की जाती है और हमारे कार्यों को निर्देशित किया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कोई उच्चतर ताक़त ही कर्ता है, न कि हम। जब ऐसा स्वाभाविक रूप से हो जाये, तब हम बाबूजी के तरीक़े को यह सोचकर अपना सकते हैं कि वह उच्चतर ताक़त मेरे मालिक हैं लिहाज़ा "वे ही कर्ता हैं"। इस मनोभाव के साथ, हम अपने कर्ता-भाव को, हमारे अहंकार को अपने मालिक को सौंपने पर प्रकट होने वाले उच्चतर कार्य के महज़ साक्षी बने रहते हैं। यही वह साक्षी-भाव है जिसे अतीत के संतजनों ने वर्णित किया है। "मैं कर्ता हूँ" यह भावना अब दूरवर्ती प्रतीत होती है। फिर भी, स्वचालन अब तक स्थापित नहीं हुआ है।

उदाहरण के लिये, यदि हम अपनी साँस लेने की प्रक्रिया को धीमा होने देकर अपनी आंतरिक अवस्था को उसके समान बना लेते हैं, तो हमारी आंतरिक अवस्था गहन होती जायेगी। इसके विपरीत, साँस लेने का विचलित पॅटर्न विरोध का भाव निर्मित करता है, जो बाद में हमारी आंतरिक अवस्था को जोखिम में डालता है।

बाहरी दशा को ठीक करके आंतरिक दशा को समायोजित करने के इस सिद्धान्त को जीवन के कई पहलुओं में लागू किया जा सकता है। फिर चाहे वह हमारे बातचीत करने का तरीक़ा हो, बाहरी चीज़ों की ओर हमारा रवैया और हमारे विचार हों, हमारा बरताव और कार्य हों, भोजन ग्रहण करने का हमारा तरीक़ा हो, सोने का तरीक़ा, साँस लेने का तरीक़ा, या देखने का तरीक़ा, वे सभी हमारी आंतरिक अवस्था को बाधित करते हैं और इसे बढ़ाने में योगदान भी देते हैं।

स्वचालन की सूक्ष्मतम अभिव्यक्ति – तुरीयातीत

आख़िरकार, साक्षी होने का भान तक नहीं रहता, और कोई कर्ता भी नहीं रहता – यहाँ तक कि मालिक भी नहीं। हालाँकि कुछ नहीं रहता, लेकिन कर्म अपने आप ही होता रहता है। इस अवस्था को तुरीयातीत कहते हैं – एक ऐसी दशा जिसमें हम डूबे रहते हैं जबकि काम बिना किसी रुकावट के होता रहता है। जैसे-जैसे हम अपनी यात्रा में आगे बढ़ते जाते हैं, यह अवस्था हर बार उच्चतर आवृत्तियों के साथ, बारम्बार उभरती है।

कुछ प्याले में डूबे रहते हैं,
कुछ बालटी में डूबे रहते हैं,
कुछ स्नान-टब में डूबे रहते हैं,
कुछ तालाब में डूबे रहते हैं,
कुछ नदी में डूबे रहते हैं,
कुछ सागर में डूबे रहते हैं,
कुछ महासागर में डूबे रहते हैं।

प्रेम और आदर सहित,

कमलेश

पूज्य श्री बाबूजी महाराज के 122वें जन्मोत्सव के अवसर पर
30 अप्रैल 2021 को दिया गया संदेश

heartfulness
purity | weaves destiny